श्रीमती जेठीबाई का जीवन परिचय



श्रीमती जेठी बाई जी का जन्म लगभग ६५ वर्ष पूर्व देस नोक (बीकानेर) के एक सम्पन्न गृहस्थ श्री जीवनलालजी सुराणा के यहां हुआ। देसनोक बीकानेर के राजाओं की कुलदेवी श्री करणी माता के मन्दिर के कारण बहुत विख्यात है। आप का सम्बन्ध मुलतान निवासी सेठ नथमलजी सेठी से हुवा।

इनके पिता श्री श्वेताम्बर तेरापथी आम्नाय को मानने वाले थे। परन्तु इन पर श्वेताम्बर मूर्तिपूजक सिद्धान्तों का ऐसा रंग चढ़ा जो उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया।

आपका स्वभाव सरल कोमल तथा मधुरता से भरा हुआ है। मुलतान का एक एक जैन बच्चा बूढ़ा तथा स्त्री पुरुष आपके स्वभाव को पसन्द करता है। अतिथि सत्कार में आपको खास तौर आनन्द अनुभव होता है। मुलतान में कोई दिन ऐसा खाली नहीं जाता या जब कि एक दो अतिथि इनके घर पर न आयें। पाँच सात आदमी की रसोई सदा ज्यादा बनाने का इनका नियम रहा है।

धर्म की तरफ इनकी अभिरुचि प्रारम्भ से ही रही है। सामायिक, प्रतिक्रमण, जप, तप, स्वाध्याय, देवदर्शन आदि क्रियायें करने का नित्य का नियम है।

आप तमाम जीवन पतिसेवा में लीन रही हैं। आपने पतिव्रत धर्म इस खूबी से निभाया है। कि इस युग में बहुत कम स्त्रियां निभा सकती हैं। सेठ श्री नथमलजी शिवपुरी आने के पश्चात वर्षों तक बीमार रहे। आपने उनकी सेवा तन मन से की और रात दिन सब काम काज छोड़कर उनकी सेवा में लगी रहीं।

आप पिछले एक वर्ष से रुग्ण शय्या पर हैं। परन्तु धर्म का ओर दृढतर ध्यान होता जा रहा है। संसार की असारता सदा इनके सन्मुख रहती है। अपनी दीर्घ बीमारी को लक्ष में रखते हुवे और शरीर को क्षण भंगुर समझ कर इन्होंने अपने हाथ से लगभग ६००) नौ सौ रुपये के दान की रकम अपनी पुत्रियों तथा धार्मिक संस्थाओं तथा ज्ञान वृद्धि के लिए निकाली है। और यह पुस्तक उन्हीं की आर्थिक सहायता से प्रकट हो रही है। आशा है पाठकगण इस पुस्तक से लाभ उठाकर उनकी भावना को सफल करेंगे।

—लक्ष्मीपति जैन बी० ए०



स्व० सेठ नथमलजी सेठी की धर्मपत्नी







श्रीमती जेठीबाई

॥ अर्हं नमः ॥

卐 श्री अक्षय निधि 卐

❀ तपो विधि ❀

—: गाथा :—

घेवग ठविश्व कलसो, जो पुरणो अक्खयाण मुट्ठिए।
जो तत्थ सत्त सरिसो, तवो तमक्खयनिहिं विति ॥ ५६७॥
(प्रवचन सारोद्धार)

अर्थ—श्री जिनेश्वर देव के सामने कुम्भ स्थापन कर उसे अक्षता—चावलों की मुट्ठी से प्रत्येक दिन भरना चाहिये। जितने दिनों में यह भरा जाय उतने दिनों तक शक्ति अनुसार जो तप किया जाता है, उस तप को गुरु लोक "अक्षय निधि"—तप कहते हैं।

गुरु—परंपरा विधि

अक्षय निधि—तप नामानुरूप गुणों को धारण करता है। इस तप को करने वाले भव्यात्मा द्रव्य-भाव दोनों प्रकार से इस लोक में और परलोक में अखूट खजाने के स्वामी हो जाते हैं।

इस तप का प्रारंभ पर्वाधिराज पर्युषण की संवत्सरी से पूर्व पन्द्रहवें दिन से करना चाहिये। पवित्र वायुमण्डल वाले विशाल स्थान में पहिले चौका देकर समवसरण का त्रिगडा स्थापन कर, सिंहासन पर श्री जिनेश्वर भगवान की प्रतिमा

विराजमान करनी चाहिये। भगवान के सामने साथिया-गहुँली कर, उस पर उत्तम धातु का या मिट्टी का कुंभ स्थापन करना चाहिये। सुगन्धी फूलों से और फूलों की मालाओं से कुंभ की पूजा करनी चाहिये। उसमें सोना चांदी मणि मोती आदि के साथ लौंग सुपारी इलायची आदि डालकर अक्षतों-चावलों की एक २ पसली थोड़ा सोलह दिन तक तीन प्रदक्षिणा देते हुए कुंभ भर जाय इस तरह से डालनी चाहिये। उस अक्षयनिधि कुम्भ के सामने अखण्ड दीप रखना चाहिये। धूप खेना चाहिये। नैवेद्य धरना चाहिये। हमेशा केशर चन्दन से पूजा करनी चाहिये। अक्षतों की पसली डाले बाद कुंभ के मुख पर श्रीफल धर कर कगन डोरडा वाली मौली से पीला या हरा-लाल रेशमी वस्त्र बांधना चाहिये। ऊपर चदवा बांधना चाहिये। बाजोठ पर श्री कल्प सूत्र की पूजा कर, स्थापन करना चाहिये। वास क्षेप से फूलों से ज्ञान पूजा करनी चाहिये।

इस प्रकार सोलह दिन तक श्री अक्षयनिधि कुम्भ और भगवान के सामने हमेशा दोनों समय प्रतिक्रमण करना चाहिये। देव वन्दन करना चाहिये। अपने हाथ से उस स्थान की प्रमार्जना करनी चाहिये। सायं—प्रातः मंगल गीत गाये जाने चाहिये। संसारी कामों से दूर रहना चाहिये।

ॐ ह्रीं ऐं नमो नाणस्स

इस महा मन्त्र का जाप मौन पूर्वक हर समय करते रहना चाहिये। कम से कम बधी हुई २० नवकार वाली जपनी चाहिये। साथिये एकावन करने चाहिये। ज्ञान तप के एकावन खमासमण देना चाहिये। पूजा प्रभावना यथा शक्ति

करनी चाहिये। ब्रह्मचर्य पूर्णतया रखना चाहिये। १५ दिन तक एकासना करना चाहिये। मन सकी का अन्तिम सोलहवा उपवास करना चाहिये। अन्तिम दिन रात्रि जागरण करना चाहिये।

पूर्णाहुति — पारणे के दिन अक्षयनिधि-कुम्भ को ताजे सुगन्धी फूलों की माला से सजाकर, सौभाग्यवती स्त्रियों के साथ धरना चाहिये। मन जाति के नैवद्य लड्डू-पेड़े-बरफी घेवर आदि के पांच थाल भरने चाहिये। मेर-संतर-केले-अगूर आदि फलों के पांच थाल भरने चाहिये, इनको भी सजा कर सौभाग्यवती स्त्रियों के माथे उठाना चाहिये। बड़ी धूम-धाम से हाथी घोड़ नगार निशान के साथ जुलूस निकाल कर शहर म घूम कर मन्दिरजी में जाना चाहिये। तीन प्रदक्षिणा देकर कुम्भ नैवेद्य के और फल के थाल श्री भगवान के सामने धरना चाहिये और चैत्यवन्दन विधि करनी चाहिये। ज्ञान का पुस्तक उसी जलूस के साथ उपाश्रय में जाकर श्री गुरु महाराज को अर्पित करना चाहिये। वहा गहूँली कर सोना रूपा नाणा से ज्ञान पूजा करनी चाहिये। गुरु वन्दन विधि करनी चाहिये। श्रीगुरु महाराज से मगलिक सुन विसर्जन करना चाहिये। जितने तप करने वाले हों उतने कुम्भ होने चाहिये। यह तप गृहस्थ-श्रावकों को करने का है। जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट एक वर्ष दो वर्ष और तीन वर्ष यह तप होता है। श्रुत देवी की आराधना चौथे वर्ष में होती है। द्रव्य भाव भक्ति पूर्वक यथा शक्ति—इस तप के करने से भव्या त्माओं को—अक्षयनिधि-ज्ञान धन की प्राप्ति इस लोक और परलोक म होती है। त्याग भावना से तपश्चर्या आदि से आत्म शुद्धि हो आत्मा परमात्मा बन जाता है।

श्री अक्षयनिधि-जिन-चैत्यवंदन

[१]

ॐ अर्हं पद आतमा, परमातम पद धार ।
गुण अनंत अक्षयनिधि, अक्षयनिधि दातार ॥१॥
उत्पाद व्यय ध्रुव गुणी, लोका लोक-अनंत ।
सत्तरारथ — देशना, फरमावें अरिहंत ॥२॥
जानें देखें ज्ञान से, ज्ञानी ज्ञान महान ।
योगारचक भाव से, साधन सिद्धि निदान ॥३॥
दान शील तप भाव ये, भेद धरम के चार ।
सेवा सुख मेवा मिले, अर्हं पद अवतार ॥४॥
सुख सागर भगवान जिन, हरि पूज्येश्वर भाव ।
अक्षयनिधि विधि नितनमूं, बोध बुद्धिगुणदाव ॥५॥

[२]

अक्षयनिधि अरिहंत पद, आतम गुण आधार ।
अक्षयनिधि तप सुव्रती, वन्दू बारबार ॥१॥
तीर्थंकर तीरथपति, जगजन — तारणहार ।
समवसरण भाखें प्रभु, तप विधि वर विस्तार ॥२॥
अन्तराय-घाती करम, अंत करण हित सार ।
अक्षयनिधि तप साधना, साधक सुखदातार ॥३॥
आतम का गुण ज्ञान है, पुरुषारथ परधान ।

ज्ञानी के सतसंग में, प्रकटे ज्ञान महान ॥४॥
गुण सागर भगवान जिन, हरिपूजित अवतार।
बोध शुद्धि हित हेतु से, वन्दूं वार हजार ॥५॥

[३]

(हरिगीतिका छन्द)

पर द्रव्य ममता भाव तज निज भाव अनुरागी हुए,
जो जीव के कल्याणकामी मुक्ति पथ पागी हुए।
पुरुषार्थ पावन साधना बल कर्म मल हर्ता हुए,
हो वन्दना मेरी उन्हें जो तीर्थ के कर्त्ता हुए ॥१॥
अतिशय अनंत सुधामधुर वाणी सुना सब लोक को,
उपदेश दे सत्तत्त्व का फैला दिया आलोक को।
अक्षयनिधि प्रभु ज्ञान घन मति जीव उद्धर्त्ता हुए,
हो वन्दना मेरी उन्हें जो तीर्थ के कर्त्ता हुए ॥२॥
निज घोर तप से विश्व को तप त्याग के आदर्श से,
परिचित किया प्रेरित किया निज आत्म के उत्कर्ष से।
अक्षयनिधि तप योग से हरि पूज्य जग भर्ता हुए,
हो वन्दना मेरी उन्हें जो तीर्थ के कर्त्ता हुए ॥३॥

[४]

वर्त्तमान शासन—पति, वर्द्धमान—भगवान।
अर्थ—रूप उपदेश दें, करें जगत कल्यान ॥१॥

सूत्र रूप गूंथे गुणी श्री गणधर महाराज ।
अविसंवादी शास्त्र ये, प्रवचन पुण्य प्रधान ॥२॥
प्रवचन-सारोद्धार में, बहुविध तप अधिकार ।
अक्षयनिधि तप साधना, सादर जन सुखकार ॥३॥
अक्षयनिधि श्रुत ज्ञान से, प्रगटे आतम-ज्ञान ।
आतम-ज्ञानी आतमा, सुखसागर भगवान ॥४॥
जिनहरि पूज्य सदा नमूं, अक्षयनिधि तपधार ।
परमातम पद वंदना, करूं मिटे भव भार ॥५॥

[५]

(वसंततिलका छंद)

आरंभ-शुद्धि-निधि-बोध-विधान-दक्षं,
स्फूर्जत्समाधि-शुभ-योगभृतां समन्तम् ।
प्रौढ-प्रताप—जित—मोह—महानिपक्षं,
पुण्यात्म-पुण्य-परिवर्द्धन-भाव-पक्षम् ॥१॥
अर्हं रहो-रहित—मर्चन—योग्य-भावं,
बाह्यान्तरारि—विजयाप्त-महा-प्रभावम् ।
तीर्थाधिराजमिह सत्सहज — स्वभावं,
सर्वात्मनापि तमसा कलयत्नभावम् ॥२॥
कर्मान्तकारि—पदवीं परमां दधानं,
सिद्धिं सदाऽक्षयनिधिं सुरमां ददानम् ।

दीप्यन्महोमर महोज्ज्वलता—निधान,
वन्दे तपो–निधि–मना विभु–वर्द्धमानम् ॥३॥

[इति अक्षयनिधि तप चैत्यवन्दन – ९]

अक्षयनिधि तप स्तवन–१

(तर्ज–श्री सीमंधर जिन राजनी रे ... अकल स्वरूप जिनवर पूजो०)

सिद्ध बुद्ध भव पारगा रे, परमातम–पद धार ।
आतम वन्दो रे ।
महावीर मङ्गलमयी रे, अक्षयनिधि अवतार ।
आतम वन्दो रे ।
वन्दो वन्दो रे विनय निधि भाव, आतम वन्दो रे ॥१॥
तीन काल तिहु लोक मे रे, भावी भाव अशेष । आतम॰
ज्ञान गुणे करी देखता रे, प्रभु सामान्य विशेष ।
आतम वन्दो रे, वन्दो वन्दो रे ॥२॥
निराकार समान्य से रे, वर विशेष साकार । आतम॰
जाने देखें द्रव्य के रे, गुण पर्याय [illegible]
आतम वन्दो रे, वन्दो वन्दो रे॰ ॥३॥
ज्ञान दर्शन उपयोग मे रे, प्रभु परिणति [illegible]
भेदा–भेद विचार मे रे, क्रम–भावि [illegible]
आतम वन्दो रे, वन्दो [illegible]

आतम का गुण ज्ञान है रे, ज्ञान सकल गुणधार ।आत०।
कर्मावरण विहीनता रे, शक्ति व्यक्ति अविकार ।
आतम वन्दो रे, वन्दो वन्दो रे० ॥५॥
कर्मों से संसार है रे, कर्मों में भवभार ।आत०।
कर्म रहित होवे प्रभु रे, मध्यातम आधार ।
आतम वंदो रे, वन्दो वंदो रे ॥६॥
श्री प्रभु पद अवलम्बने रे, गुण अक्षयनिधि भार ।आत०।
प्रकटे विघटे विश्व में रे, कर्म जनित दुख दाव ।
आतम वंदो रे, वंदो वंदो रे० ॥७॥
अक्षयनिधि गुण साधना रे, अक्षयनिधि तप धार ।आत०।
अक्षयनिधि अरिहंत का रे, पद पावे निरधार ।
आतम वंदो रे, वंदो वंदो रे० ॥८॥
पर्वराज पर्यूषणा रे, पावे पुण्य संयोग ।आत०।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल की रे, भाव शुद्धि सुख भोग ।
आतम वंदो रे, वंदो वंदो रे० ॥९॥
अक्षयनिधि विधि साधनारे, आराधक अवधान ।आत०।
आतम परमातम बने रे, सुख-सागर भगवान ।
आतम वंदो रे, वंदो वंदो रे ॥१०॥
जिनहरि- पूज्येश्वर प्रभु रे, सन्मति श्री महावीर ।आत०।
गुण कवीन्द्र गाया करो रे, मानो धन तकदीर ।
आतम वंदो रे, वंदो वंदो रे० ॥११॥

अक्षयनिधि–विधि स्तवन——२

(तर्ज–सीता माता की गोदी में हनुमत डारी मुदड़ी)

सुखकर समवशरण में शासन–स्वामी देवें देशना ।
अमृत पदवी पावें भवि सुन, अमृत वरिसी देशना ॥टेर
आतम रुची कर्म विधान, मन में भटके दु ख प्रधान ।
धर्माराधन से सुख पावे, स्वामी देवें देशना ॥सु० १॥
दानादिक हैं चउविध धर्म, तप-पद काटे कलुषित कर्म ।
आतम स्वभाव सुनिर्मल होवे, स्वामी देवें देशना ॥सु०२॥
आगम में तप विविध प्रकार, अक्षयनिधि तप सुख भंडार
आराधक अक्षयनिधि पावें स्वामी देवें देशना ॥सु० ३॥
पर्यूषण सवत्सर पर्व, पनरह दिन पहिले हो अगर्व ।
अक्षयनिधि विधि साधक मावें, स्वामी देवें देशना ॥सु०४॥
स्वस्तिक ज्ञान की पूजा करना, मगल घट अक्षत से भरना ।
भक्ति द्रव्य-भाव चित धरना, स्वामी देवें देशना ॥सु० ५॥
• आवश्यक प्रति दिन सुखकारा, पालो ब्रह्मचर्य अविकारा ।
आतम परमातम लयकारा, स्वामी देवें देशना ॥सु० ६॥
सुरभित धूप दशाग उदारा, दीपक ज्योति अखडित धारा ।
सुरभित ज्योतिर्मय जीवन हो, स्वामी देवें देशना ॥सु०७॥
चाढ़ो विकसित सुन्दर फूल, चाढ़ो सुमधुर फल बहुमूल ।
विकसित सुमधुर जीवन होवे, स्वामी देवें देशना ॥सु०८॥

पूजा प्रभावना इकचित्त, करना देव वंदन भी नित्त।
हरना पाप-ताप समारा, स्वामी देवें देशना ॥ सु० ९ ॥
ध्यावो निज आतम गुण ज्ञान, उत्सव हय गय रथ महान।
बाजे गाजे प्रभु का मेटो स्वामी देवें देशना ॥सु० १०॥
अक्षयनिधि तप एकामन से, पूर्ण करना तन-मन धन से।
गावें जिन हरि जय जय कारा, स्वामी देव देशना ॥सु०११॥

अक्षयनिधि तप स्तवन—३

(तर्ज—"ओ पंछी बावरिया")

परमातम गुण गावो, तपस्वी तन मन से।
आतम में लय लावो, तपस्वी तन मन से ॥ टेर ॥
अक्षयनिधि तप इच्छा रोधन,
करने से हो आतम शोधन,
कर्मों को दूर भगाओ, तपस्वी तन मन से ॥ पर० १ ॥
जघन्य मध्यम यह उत्कृष्टा,
इक दो तीन वरस में पुष्टा,
निज गुण ज्ञान उपाओ, तपस्वी तन मन से ॥ पर० २ ॥
श्रुत देवी को चौथे वरसे
अक्षय निधि विधि साधन हरसे,
भाव अक्षयनिधि लाओ, तपस्वी तन मन से ॥ पर० ३ ॥
निज जिन का मंगल घट ठाओ,

अक्षय थोरा नित्य भराओ,
उत्सव ठाट रचाओ, तपस्वी तन मन में [illegible]
समवशरण में प्रभु पधराओ,
कल्पसूत्र पूजा सिखाओ,
अखंड ज्योति जगाओ, तपस्वी तन मन में [illegible]
धूप दशांग फूलों की माला,
भर भर फल नैवेद्य के थाला,
भक्ति में प्रेम लगाओ, तपस्वी तन मन में [illegible]
पंच शब्द वाजित्र बजाओ,
रूप गज रथ सिंगार सजाओ
शासन शोभा बढ़ाओ, तपस्वी तन मन में [illegible]
पूजा और प्रभावना करके,
पुन्य भंडारा अपना भरके,
जीवन में हुलसाओ तपस्वी तन मन में [illegible]
सामायक पडिक्कमणा करके,
देव वंदन गुरु वंदन करके,
रत्नत्रय प्रगटाओ, तपस्वी तन मन में [illegible]
सोलह दिन तक तप करके
संवत्सरी दिन पूरण करके
प्रभु गुण गान जगाओ, तपस्वी तन मन में [illegible]
अक्षय निधि अदा [illegible],

जिन हरि पूज्य वीर प्रभु बोलें,
जय जय नाद गुंजाओ, तपस्वी तन मन से ॥ पर० ११ ॥

अक्षयनिधि-ध्यान स्तवन-४

(तर्ज—सरोता कहा भूल आये०)

ॐ अर्हं पद प्यारा

हमारे मन भागया, ॐ अर्हं पद प्यारा ॥ टेर ॥
ॐ अर्हं पद आतम अनुपम, गुण अक्षयनिधि धारा।
द्रव्य भाव अक्षयनिधि तप म, है वह लक्ष हमारा ॥हमारे.१॥
पर पुद्गल परिणति को तजकर, मिथ्या भाव मिटाया।
सम्यग्दर्शन करके आतम आतम मे ठहराया॥हमारे २॥
ज्ञानादिक गुण पर्यायों का आतम पिण्ड हमारा।
परद्रव्यों से जुदा अपना, स्व स्वभाव निरधारा॥हमारे ३॥
स्व-स्वभाव मे ही है सत्ता, लेश न पर पसारा।
पर में फस कर भवमें भटका, पाया आज किनारा ॥हमारे ४॥
हेय—ज्ञेय सारी दुनिया में, कोई नहीं हमारा।
आतम ही आतम का है, यह उपादेय अधिकारा ॥हमारे ५॥
द्रव्यालंबन भावाभिमुख, वृत्ति आज हमारी।
भावरूप अक्षयनिधि आतम, ध्यान विधि विस्तारी।हमा ६।
शुद्धातम शुद्धि अभिवृद्धि, सिद्धि समृद्धि विधाना।
समझ समझ कर आराधन यह, हमने मनमें ठाना हमारे ७।

मनमगल घट हुआ हमारा, देवगुरु मतगंगी ।
गुरु अक्षयनिधि भरते जीवन, पावन पद मतगंगी ।हमा ८।
वन्दगुरु वन्दरुम उमा, सुमनम् पूजा चंगी ।
ज्ञानदर्शन अन्तहित ज्योति, धूप घटा गुण रंगी ।हमारे ६।
वर्द्धमान आतम सुख सागर, शासन जय जय कारी ।
दरमगुरु भगवान शब्द में, श्रद्धा वढी हमारी ।हमारे १०।
जिनहरि पूज्य परम पुरुषोत्तम, अक्षयनिधि अधिकारी ।
आतम परमातम पद पावें, कर्म कलंक निवारी ।हमारे ११

अक्षयनिधि तप—महिमा स्तवन—५

[दोहा]

श्री.पत्तरद्धि पार्श्वजिन, नइ प्रणमूं परभात ।
उत्तम अक्षयनिधि तणो, भाखुं पर अवदात ॥ १ ॥
पापप—मारोद्धार म, तपके भेद अनेक ।
अक्षयनिधि-तपकीविधि, द्रव्य भाव सविवेक ॥ २ ॥
अवदान का मेटता अक्षयनिधि तप सार ।
पुरुषोत्तम रात्रा कहे, अक्षयनिधि भण्डार ॥ ३ ॥
पर्युषण पाक्षा प्रथम, तप आरंभ विधान ।
जिनवाणी बहुमान से, प्रकटे अक्षय निधान ॥४॥

ढाल—१

(तर्ज—आट्टे लाल)

जम्बू भरत प्रधान, पुरी विशाला अभिधान ।
आट्टे लाल, शासन स्वामी समोसर्याजी ॥१॥

चेडा राजा नाम, श्रावक गुण अभिराम।
आछे लाल, श्रीजिनवन्दन आवियाजी ॥२॥
उपदेशें भगवान, दुर्लभ नरभव जान।
आछे लाल, धर्म क्रिया सुण पामियेजी ॥३॥
दान शीयल तप भाव, कीजें पुण्य प्रभाव।
आछे लाल, आतम गुण उजवालियेंजी ॥४॥
तप के भेद अनेक, कीजें जो सविवेक।
आछे लाल, कर्म निकाचित काटियेंजी। ५॥
तामे अक्षयनिधि भेद, साधन हारे खेद।
आछे लाल, अक्षयनिधि प्रस्तारियेंजी ॥६॥
अक्षयनिधि विधि योग, पुरुषोत्तम सुखभोग।
आछे लाल, पुण्यचरित्र श्रवधारियें जी ॥७॥
पुरुषोत्तम कुण एह, पुण्य-सुपावन देह।
आछे लाल, पूछे चेटक राजियो जी ॥८॥

❀ दोहा ❀

फरमावें शासन पति, सुणजो चेटक राज।
पुरुषोत्तम पावन चरित, निज आतमहित काज॥

ढाल—२

(तर्ज—सोभागी जिनसु लागो अविहड रंग)

नमो रे नमो ज्ञान-घनी जिनचंद
दमो रे दमो आतम इन्द्रिय वृन्द ॥ टेर ॥

भाविक भावे भावनाजी, श्री भद्रंकर सेठ ।
पुरुषोत्तम सेवक सुखेजी, उत्तम गुण जग सेठ ॥नमो०१॥
भद्रंकर आराधतो जी, अक्षयनिधि तप सार ।
अनुचर अनुयायी हुयोनी, भव्य भाव चितधार ॥नमो०२॥
करण करावण जाणियेजी, अनुमोदन शुभभाव ।
तीनों एक समान है जी, त्रिकरण सफल स्वभाव ॥नमो०३॥
पुरुषोत्तम प्रवहण चढ़योजी, सेठ तणे व्यापार ।
दैवयोग से भजियोजी, प्रवहण सिन्धु मझार ॥नमो०४॥
ॐ अर्हं पद ध्यान में जी, पुरुषोत्तम लयलीन ।
सागर तट भटपट गयोजी, निरह स कष्ट भयोचीण॥नमो०५॥
पद पद सपद पामियोजी, रतनपुरी रो राज ।
सेवक वह स्वामी भयोजी, पुरुषोत्तम महाराज ॥नमो०६॥
पटरानी पद्मावती जी, पुण्य तणे परिणाम ।
दपति भावे साधतानी, धरम अरथ अरु काम ॥नमो०७॥
द्रव्य भाव अक्षयनिधिजी, श्री पुरुषोत्तम भूप ।
संनिधि साधन कीनियेजी, अधिकारी अनुरूप ॥नमो०८॥

❀ दोहा ❀

रतनपुरी पावन करें, मुनिसुव्रत भगवान् ।
पुरुषोत्तम यत्न निधि, करे विनय बहुमान् ॥

ढाल—३

(तर्ज—तीरथनी आसातना नवि करिये)

परमातम पद वदना नित करियें ।
हारे निज आतम आनंद भरियें ॥
हारे भव सागर हेला तरियें ।
हारे काटो कर्मो का फंद ॥ परमातम० टेर ॥
उपदेशें सुनत प्रभु समोसरणे ।
हारे भवि निर्मल अंत:करणे ॥
हारे धर्माराधन शुद्धाचरणे ।
हारे टारे दु:ख द्वंद ॥ परमातम० १ ॥
पुरुषोत्तम पूरब भवे अपराधी ।
हारे मुनि—निंदा धर्म—विराधी ॥
हारे यातें सेवक पदवी लाधी ।
हारे तोडो पाप—प्रबंध ॥ परमातम० २ ॥
अक्षयनिधि तप इह भवे अधिकारी ।
हारे अक्षयनिधि—संपति सारी ॥
हारे राज—भोग मिलें सुखकारी ।
हारे यह पुण्य प्रबंध ॥ परमातम० ३ ॥
आतम कर्त्ता कर्म का फल भोगी ।
हारे भव में भटके जड जोगी ॥
हारे निर्वाण लहे उपयोगी ।

हारे होय शिव सुख-कंद ॥ परमातम० ४ ॥
श्रीमुनि-सुव्रत-नाथ रा अनुयायी ।
हारे पुरषोत्तम पुण्य कमाई ॥
हारे निज आतम ज्योति जगाई ।
हारे पावे परमानंद ॥ परमातम० ५ ॥
ज्ञान अक्षयनिधि साधना विधि करियें ।
हारे अज्ञान दशा परिहरियें ॥
हारे परमातम पदवी वरियें ।
हारे छोडी छल—छंद ॥ परमातम० ६ ॥
शासन स्वामी वीरजी फरमाया ।
हारे जिन आगम में गुण गाया ॥
हारे अध्यातम के मन भाया ।
हारे वर आश्रव बंद ॥ परमातम० ७ ॥
द्रव्य भाव भक्ति भरू निज घट में ।
हारे अक्षत भरू मंगल पट में ॥
हारे धरू धीरज मैं संकट में ।
हारे ध्याउ जिनचंद ॥ परमातम० ८ ॥

कलश

इम देव वंदन ज्ञान-ध्याने पाप-ताप निकंदनं,
अक्षयनिधि तप साधन जीवन परम आनंदनम् ।
सुग्र सिंधु पद भगवान जिनहार पूज्य पावन शासनं,
वन्दू सदा मैं भक्ति से परमात्म-गुण सुविकासनम् ॥

अक्षयनिधि–स्तुति—१ ।

ॐ ह्रीं ऐं बीजाक्षर श्रुत पावन मंत्र,
णाणस्स नमो नित ध्यावो गुरु परतंत्र ।
गुरु पारतंत्र्य में हो स्वतंत्रता योग,
अक्षयनिधि आतम पावें शिव सुख भोग ॥१॥
ज्ञानावरणादि घाति-करम कर अंत,
सुर-रचित सिंहासन राजें श्री अरिहंत ।
पुण्योदय—प्राणी पावें दर्शन योग,
अक्षयनिधि आतम पावें शिव-सुख भोग ॥२॥
जिन आगम पूजा प्रकटे आगम ज्ञान,
मंगल घट पूरण अक्षत-गुण परधान ।
हो द्रव्य-भाव से विधि सद्गुरु संयोग,
अक्षयनिधि आतम पावे शिव-सुख भोग ॥३॥
शासन परभावना प्रभु पूजा अधिकारी,
पर्युषण पाखी—एकासन तप धारी ।
रक्षक हों उनके "सुर-गणपति हरि" लोग,
अक्षयनिधि आतम पावें सिव-सुख भोग ॥४॥

अक्षयनिधि–स्तुति—२ ।

संवत्सरी अंतिम सोलह दिन अविकारी,
अक्षयनिधि तप विधि जगमें जय जय कारी।

अर्हं पद ध्याने ज्ञान सुधारस पीन,
आतम परमातम होवें भाव-अदीन ॥१॥
पुरुषोत्तम-पद्मावती प्रमुख नर-नारी,
अक्षयनिधि साधन जग ज्योति विस्तारी।
तप कर्म तपावे पाप खपावे भारी,
सिद्धातम होवें जाऊं मैं बलिहारी ॥२॥
आगम में गाया अक्षयनिधि अधिकार,
मुनि सुव्रत स्वामी चरण-शरण स्वीकार।
पुरुषोत्तम पुरुषोत्तम पद पाया धन्य,
आगम आराधूं, तन-मन-भाव अनन्य ॥३॥
अक्षयनिधि तप से अन्तराय हो दूर,
सुर "गणनायक हरि" देवें सुख भरपूर।
अक्षयनिधि आतम-शुद्धि-शुद्धि अतिरेक,
श्रुतदेवी देवें शुभ-गुण पुण्य विवेक ॥४॥

अक्षयनिधि-स्तुति—२।

शासन-पति राजें समवसरण अभिराम,
आगम उपदेशें भव्य जीव विश्राम।
मंगल घट अक्षत गुण पूरण परिणाम,
सुविहित विधि पूजा-गाउं प्रभु गुण ग्राम ॥१॥
ज्ञानावरणी से रुका हमारा ज्ञान,
अज्ञान मिटावे अखंड ज्योति ध्यान।

निज आतम ध्याने प्रगटे पुण्य प्रकाश,
ध्यावे परमातम मनमें धर विशराम ॥२॥
प्रवचन में भाख्यो अक्षयनिधि आरम्भ,
पर्यूषण पहिले पाखी दिन निर्दम्भ।
पूजा-परभावना एकासन तप व्रत,
उपवासी होकर पाउ ज्ञान अनंत ॥३॥
तप वींचे होवें सदा सहायक देव-
'गणपतिहरि' वांछित फल देवे स्वयमेव।
अक्षयनिधि तप से अक्षयनिधि हो जाय,
श्रुत-साख्रिय देवे श्री श्रुतदेवी माय ॥४॥

अक्षयनिधि-स्तुति—४।

[मालिनी छन्द]

अक्खयनिहि-निहाण सव्व भाव प्पहाण,
निरुवरर-उवइट्ठं भव्व-जीवाण इट्ठं।
-कुगइ-निरोहं पुण्य-रुक्ख-प्परोह,
सरइ पणव-मत अप्पणो नाणतत ॥ १ ॥
-भविय-भवजाल नाणरुव विसाल,
पयडिय-गुणमाल पुण्ण-रुव चिसाल।
-कुमइ-कुचाल, मोह-सम्मोह गाल,
सरइ निय-रपाल सिद्धचोई सकाल ॥ २ ॥
-सहिय-माया-लक्खिय हो अमाया,

परमगुण-सुय थीये माणसे जाणगीय ।
तस्गुण-गय-भाय सामग्ग मण्मभाय,
सरइ सरइ मारं होउ ससार पार ॥ ३ ॥
अक्खयनिहि सर्वम्मि-कुरामणीयामगम्मि,
जिणवर-गय-पूआ-दव्व भाय-प्पमूआ ।
जणयइ बहु सुक्ख सयय सोक्ख पुण्ण,
"जिणहरि" बहु मार्ग, जाय अप्पमाग्गे ॥ ४ ॥

अक्षयनिधि-स्तुति—५ ।

[वसन्त तिलका]

अर्हं नम प्रथमतो हृदये निधाय,
दिव्य तपोऽक्षयनिधान मथो विधाय ।
प्राप्य सुराज्य-सुख मत्र परत्र लोके,
स्वर्गापवर्ग—वनित सुजना भजन्त ॥ १ ॥
श्रोति - स्वरूपमपि संभवतीह तेषां,
येषां मनोऽक्षयनिधि-व्रत-सावधानम् ।
श्रासुमनाभिपधिभो पुण्योत्सवेन,
प्राज्य पुराहमपि सत्सतत भजामि ॥ २ ॥
जैनागमो जयतु यत्र पवित्र—मात्र,
पात्र तपोऽक्षयनिधे प्रथित प्रशस्तम् ।
इन्द्रा-सुरोधन-विवेक-दयैक-बुद्धि—
मोऽद्यत्मना भवतु धन्य सम्यक्त्वशुद्धये ॥ ३ ॥

देवी श्रुतस्य सुखसागर—वृद्धि—हेतु-
मंयास्मदा भगवदङ्घ्रिजाश्रितानाम्।
पाप-प्रणाश-चतुरा हरिपूज्य-भावा,
श्रीभारती भगवतीह महाप्रभावा ॥ ४ ॥

अक्षयनिधि तप में ज्ञान-पद वंदन

❀ दोहा ❀

पर्युषण पावो प्रथम, तप श्री अक्षय निधान।
आराधन कर भाव से, वन्दू ज्ञान महान ॥ १ ॥
अनुष्ठान अमृत-गुणी, अक्षयनिधि विधि जान।
पद समकित गुणठाण से, वन्दू ज्ञान महान ॥ २ ॥
हेय—ज्ञेय संसार है, उपादेय स्वज्ञान।
तीन भाव परकाश कर, वन्दूं ज्ञान महान ॥ ३ ॥
समभावें छहद्रव्य थे, गुण—पर्याय—वितान।
रूपा-रूपी भाव में, वन्दू ज्ञान महान ॥ ४ ॥
परमारथ की देशना, भाखें श्री भगवान।
अधिकारी आराधते, वन्दू ज्ञान महान ॥ ५ ॥
समकित दृष्टि जीव को, प्रगटे सम्यक् ज्ञान।
तसफल विरति धारकर, वन्दू ज्ञान महान ॥ ६ ॥
त्रस थावर जग-जीव को, तरतम भाव निदान।
क्षयोपशम प्रकटित पुनित, वन्दू ज्ञान महान ॥ ७ ॥

मनन रूप मति ज्ञान से, प्रकट आतम ज्ञान।
हेतु हेतुमद् भाव से, वन्दूं ज्ञान महान ॥ ८ ॥
इन्द्रिय मन सहा जनित, जीवन में परधान।
मग्रण्य आतम द्रव्य का, वन्दूं ज्ञान महान ॥ ६ ॥
मति पूर्वक श्रुत ज्ञान है, पावन नय परमाण।
सांगोपांग अनेक विध, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १० ॥
अरथे अरिहन्त भाखियो, गुण रतनों की खान।
सूत्रे गणधर गूंथियो, वन्दूं ज्ञान महान ॥ ११ ॥
स्वर व्यंजन पद वरणना, वर रचना असमान।
आतम भाव प्रकाश में, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १२ ॥
श्रुत अनंत अरथे भर्यो भर्यो भाव विज्ञान।
आगम निगम सुगम सहित, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १३ ॥
भवण क्रिया श्रुत लाभ हो, टरे पाप अभिमान।
पाप गया सुख ऊपजे, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १४ ॥
त्रिपदी त्रिवेनी जहां, हरे मोह अज्ञान।
जीवन को पावन करे, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १५ ॥
श्रीश्रुत ज्ञानी केवली, केवल ज्ञान समान।
जड़ चेतन भासन करे, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १६ ॥
मर्यादा-अवधि विषय, रूपि-पदारथ मान।
देश सर्व प्रत्यक्ष यह, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १७ ॥
संज्ञी जीव विशेष के, जानें मन संज्ञान।
मन-पर्यायी भाव मय, वन्दूं ज्ञान महान ॥ १८ ॥

माया-लोभ विलोपने, परतिग अव्ययध्यान ।
क्षायिक भावे वरतने, वन्दु ज्ञान महान ॥ १९ ॥
गुण सागर संसार में, वर्द्धमान भगवान ।
अविनाशी आतमा, वन्दु ज्ञान महान ॥ २० ॥
अक्षयनिधि सुगम विधि, बोध सुद्धि अवधान ।
जिन हरि पूजित लोक में, वन्दु ज्ञान महान ॥ २१ ॥

—:०:—

ऊपर लिखे दोहे श्री श्रुतज्ञान की स्थापना की प्रदक्षिणा करते हुए—खमासमण पूर्वक बोलने चाहिये ।

—: दैनिक-विधि :—

इर्यावही करके इच्छाकारेण सन्दिसह भगवन् अक्षयनिधि तप चैत्यवन्दन करूं इच्छं कह कर—चैत्यवंदन जयवीयराय पर्यंत कहे । बाद सुयदेवयाए करेमि काउस्सग्गं—अन्नत्थ एक नवकार का काउस्सग्ग । नमोऽर्हत् कहकर—स्तुति कहे—

सुयदेवया भगवइ, नाणावरणीय कम्म संघाय ।
तेसिं खवेउ सययं, जेसिं सुअसायरे भत्ति ॥ १ ॥

बाद एकासन का प्रत्याख्यान करना चाहिये । नवपद पूजा में से ज्ञान पद पूजा पढ़े—



श्रीज्ञानपद-पूजा

[दूहा]

सप्तम पद श्री ज्ञान नो, सिद्ध चक्र तप मांहि ।
आराधीजे शुभ मने, दिन दिन अधिक उच्छांहि ॥१॥

श्लोक

अन्नाणसंमोहतमोहरस्स, नमो नमो नाणदिवायरस्स ।
पंचप्पयारा उवगारगस्स, सत्ताण सव्वत्थपयासगस्स ॥१॥
हुवे जेहथी सर्व अज्ञान रोधो, जिनाधीश्वर प्रोक्त अर्थाविबोधो ।
मति आदि पंच प्रकारे प्रसिद्धो, जगद्भासने सर्वदेवाविरुद्धो ॥२॥
यदीय प्रभावे सुभक्ष अभक्षं, सुपेय अपेयं सुकृत्यं अकृत्यं ।
जेणे जाणीए लोकमध्ये सुजाण, सदा ते विशुद्धं सदैव प्रमाणं ॥३॥

ढाल

भव्य नमो गुणज्ञानने, स्वपर प्रकाशक भावे जी ।
परजाय धर्म अनंतता, भेदाभेद स्वभावेजी ॥१॥ (चाल)

(उल्लाला)

जे मुख्य परिणति सकल ज्ञायक, बोध भाव विलच्छना ।
मति आदि पंच प्रकार निर्मल, सिद्ध साधन लच्छना ॥
स्याद्वादसंगी तत्त्वरंगी, प्रथम भेदा-भेदता ।
सविकल्प ने अविकल्प वस्तु, सकल संशय

ढाल (आसाउरी)

भविका, सिद्धचक्र पद वंदो ॥१॥

भक्ष्याभक्ष्य न जे विण लहिये, पेय अपेय विचार ।
कृत्य अकृत्य न जे विण लहिये,ज्ञान ते सकल आधाररे ॥१॥
प्रथम ज्ञान ने पछी अहिंसा, श्री सिद्धांते भाख्यु ।
ज्ञानने वंदो, ज्ञान म निंदो,ज्ञानीए शिवसुख चाख्यु रे ।।भ ॥२॥
सकल क्रियानु मूल जे श्रद्धा, तेहनु मूल जे कहिये ।
तेह ज्ञान नित्य नित्य वंदीजे,ते विण कहो केम रहियेरे ।।भ ॥३॥
पंच ज्ञानमांहि जेह सदागम, स्वपर प्रकाशक जेह ।
दीपक परे त्रिभुवन उपकारी,वली जेम रवि शशी मेहरे।।भ ॥४॥
लोक ऊर्ध्व अधो तिर्यग् ज्योतिष, वैमानिक ने सिद्ध ।
लोकालोक प्रगट सवि जेहथी, तेह ज्ञाने मुझ शुद्धरे ।।भ ॥५॥

ढाल

ज्ञानावरणीय जे कर्म छे, क्षय उपशम तस थाय रे ।
तो हुए एहिज आत्मा, ज्ञान अबोधता जायरे ॥१॥
वीर जिनेश्वर उपदिशे, तुमे सांभलजो चित लाई रे ।
आतम ध्याने आतमा, रिद्धि मिले सहु आई रे ॥वी० २ ॥

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानंत ज्ञानशक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय श्रत्पर्यनीव ज्ञानपदधारकाय श्री जिनेन्द्राय जल चंदन पुष्प धूप दीप गंध अक्षत नैवेद्य यजामहे स्वाहा ।

इस मंत्र को पढ़कर उन द्रव्यों को चढ़ावे । वासक्षेप पूजा करें । सोना रूपा नाणा चढ़ावें । ज्ञान की पुस्तक लिखावें । ज्ञान की पुस्तकें छपावें । पढ़ने वालों की भक्ति करें ।

❁ अक्षयनिधि तप माहात्म्य कथा ❁

— ❀ —

भारतवर्ष के बिहार प्रांत में गणतन्त्र की सुप्रसिद्ध राजधानी 'विशाला नगरी' गढ़-मठ-मन्दिर-महल-मकानात-बाजार-बाग बावड़िया—कुँए—तालाब—वन—उपवन आदि अपने अनुपम साधना से संसार में सर्वोत्कृष्ट मानी जाती थी। गणतन्त्र की अध्यक्षता करने वाले महाप्रतापी—महाराज 'चेटक' अपनी उदार न्याय नीति से विशाला का शासन करते थे। आपके राज्य में प्रजा अपने सुखी जीवन में स्वराज्य का अनुभव करती थी।

महाराजा चेटक भगवान श्रीमहावीर देव के परम श्रावकों में से एक थे। समय २ पर सत्संग का लाभ प्राप्त करने के लिये साधु सन्तों के सदुपदेश सुनकर प्रसन्नता का अनुभव करते थे। एक समय भगवान श्री महावीर देव विशाला के उपवन में पधारे। महाराज चेटक बड़े उत्कंठित भावों से अपने राज परिवार एवं नागरिक लोगों को लेकर राजसी ठाठ के साथ भगवान के स्वागत के लिये उपवन में पहुँचे। चँवर-छत्र-जूते सवारी और सचित्त [illegible] त्याग कर महाराजा ने बड़े विनय के साथ भगवान को वन्दना की और भगवान का अभिनन्दन करते हुए अपनी आत्मा को धन्य माना।

इसी समय देवताओं ने वहां समवसरण-सत्सग सभा की तैयारी की। भगवान अपनी दिव्य साधु मडली के साथ व्याख्यान पीठ पर विराजे। महाराजा चेटक आदि लोक अपने उचित स्थानों पर जा बैठे। सावधान मन से भगवान का उपदेश सुनने लगे। भगवान ने अपनी सुधामधुर देशना फरमाना शुरु किया—

भव्यात्माओ! प्राणी मात्र सुख को चाहते हैं। पर ससार म सुख के स्थान में दु ख ही दु ख अनुभव होता है। कारण प्राणी अपने गलत पुरुषार्थ से दुःख के ही बीज बोया करता है। बीज के अनुरूप ही पेड़ और फलका होना भी स्वाभाविक है।

१—मिथ्यात्व=अज्ञान से, २—अविरति-अमर्यादित जीवन से, ३—कषाय-क्रोध मान माया और लोभ से ४—योग मन वचन कायाकी भवाभिमुख सासारिक प्रवृत्ति से जो पुरुषार्थ किया जाता है, उससे जो सस्कार आत्मा म सबधित हो जाते हैं, उन सस्कारों को 'कर्म' कहते हैं। ये कर्म—समय आने पर अपने आप विपाक फल रूप से भोगने पड़ते हैं।

कर्मों की सत्ता को समूल नष्ट करने के लिये इच्छा रोधन रूप तपो धर्म प्रभावशाली उपाय माना गया है। तपो धर्म कई प्रकार से अनुष्ठित होता है। उसम भी अक्षयनिधि तप आत्मा की ज्ञान दर्शन चारित्र रूप गुणों की अक्षयनिधि को प्रकट करता है। इस लोक और परलोक में इस अक्षयनिधि तप के प्रभाव से पुरुषोत्तम-पुरुषोत्तम के जैसे मनुष्य अपनी गुलामी को मिटाकर

कर भाव साम्राज्य का स्वामी बन जाता है। महाराजा चेटक ने विनय के साथ भगवान से प्रार्थना की कि हे भगवन! वह भाग्यशाली पुरुषोत्तम कौन हुआ, जिसका पवित्र नामोल्लेख आप श्री के मुखारविंद से सुनने को मिला। भगवान ने फरमाया कि— हे राजन्! सावधानता से इस पुण्य चरित को सुनिये।

बीसवें तीर्थंकर श्रीमुनिसुव्रत स्वामी के शासन काल में दक्षिण दिशा के सामुद्रिक किनारे पर भृगुकच्छ नाम का एक भारी बन्दरगाह स्थल जल के विशिष्ट-व्यवसायों का एक केन्द्र स्थान बना हुआ था। यहां भद्रकर नाम का एक धन कुबेर साधु संतों की सत्संगति से अपने गृहस्थ जीवन को मर्यादित व्रतोंवाला बनाये हुए रहता था। श्रावक भद्रंकर के घर में एक सरल परिणाम वाला सेठ का प्रेम पात्र पुरुषोत्तम नाम का एक नौकर नौकरी करता था।

सेठ के धार्मिक संस्कारों की छाप उनके परिवार में एवं नौकर चाकरों पर भी सुन्दर रूप से पडी थी। श्रीज्ञानतीर्थ नाम के साधुपुंगव अपने सयमि शिष्यों के साथ एक दिन भृगुकच्छ में पधारे आपने तभी धर्म की व्याख्या के प्रसग में अक्षयनिधि तप की भावना बताई। भद्रकर सेठ ने अक्षयनिधि व्रत को श्रीगुरु मुख से स्वीकार कर आराधन किया। उस समय सेठ की सेवा में रहने वाले पुरुषोत्तम की भव्य भावना भी अक्षयनिधि व्रत विधि साधना में आकृष्ट हुई।

प्रभु पूजा गुरु भक्ति, ज्ञान साधना, तप, ध्यान, रात्रि जागरण आदि में यह पुरुषोत्तम सेठ का अनुगामी हो गया। इस साधना से उसने भारी पुण्य का उपार्जन किया। सेठ ने उसे साधारण नौकरी से हटाकर अपने व्यापार का प्रधान कार्यवाहक बना दिया।

एक दिन दूसरे देशों में व्यापार के निमित्त भेजे हुए जहाज में पुरुषोत्तम मुख्याधिकारी होकर सामुद्रिक यात्रा को कर रहा था। अचानक आ रहे के उठने से जहाज टूट गया, पर पुरुषोत्तम 'ॐ नमो अरिहंताणं'—मन्त्र के उच्चारण के साथ मगर मच्छ की पीठ पर बैठ कर किनारे पर बिना किसी कष्ट के पहुँच गया।

किनारे पर रत्नपुरी नाम की एक नगरी वर्त्तमान थी। वहां का राजा रत्नसिंह उसी रोज अपुत्रिया मृत्यु प्राप्त हो गया था। उस समय मन्त्रि मंडल ने यह तय किया कि पांच दिव्य किया जाय और जिस पुण्यवान पुरुष को दिव्य द्वारा चुना जाय, उसे ही राजा बनाया जाय।

हाथी सजाया गया, घोड़ा तैयार किया गया, कुँवारी कन्या माला लिये फिरने लगी चवर और छत्रधारी पुरुष तैयार हुए। इन सबके साथ बाजे बजते हुए मंत्री मण्डल आदि अधिकारी वर्ग प्रमुख नागरिक लोग जलूस के साथ चलने लगे। महाभाग पुरुषोत्तम उसी समय किनारे पर थोड़ी देर सुस्ता कर शहर की ओर आने लगा था, कि रास्ते में हाथी ने सूंड ऊंची करके उसे

अपने कंध पर बिठा दिया। घोड़ा हिनहिनाने लगा। कन्या ने अपनी माला उसे पहिना दी। चँवर डुलाये गये एवं छत्र धारण किया गया। आकाश में शासन देवता ने "महाराजाधिराज पुरुषोत्तम देव की जय हो" के नारे लगाते हुए फूलों की वृष्टि की।

जुलूस के सभी लोग आमोद-प्रमोद में इस नये राजा की जयनाद से स्वागत करने लगे। चारों ओर प्रसन्नता का वायु मंडल छा गया। एक दिन का नौकर पुरुषोत्तम, महाराजाधिराज पुरुषोत्तम देव बन गया। पद्मावती नाम की एक सद्गुणशीला परम सौन्दर्य शालिनी राजकन्या के साथ विवाह हुआ। दूसरी भी कई सुन्दर राज कन्याओं का पाणिग्रहण किया। पट्टराणी पद्मावती के साथ अपने सुखी जीवन को बिताते हुए रत्नपुरी का राज्य न्याय नीति के साथ पालन करने लगा।

एक दिन वहां भगवान श्रीमुनिसुव्रत स्वामी पधारे। महाराजा पुरुषोत्तम देव भगवान की वंदना को आये। भगवान ने तप धर्म की महिमा का वर्णन करते हुए अक्षयनिधि का स्वरूप बताया। महाराजा पुरुषोत्तम ने कहा हे भगवन ! किस कारण से एक दिन का सेवक मैं इस साम्राज्य का स्वामी बन गया हूँ।

भगवान फरमाने लगे कि इसी अक्षयनिधि तप के अनुमोदन से हे देवानुप्रिय ! यह सारी साम्राज्य लीला आज भोग रहे हो। पुण्य क्रिया का करना कराना और अनुमोदन करना ये तीनों करने वाले को लाभदायक ही होते हैं।

महाराजा पुरुषोत्तम देव ने विशेषतया सावधानी से अक्षयनिधि तप की साधना की। उसका लोगों में भारी प्रचार हुआ। बाद में आपने पद्मोत्तर देव नाम के प्रधान पुत्र को राज्य का भार सौंप कर भगवान श्री मुनिसुव्रत स्वामी के श्रीचरणों में भागवती दीक्षा, स्वीकार की।

राजर्षि पुरुषोत्तम देव द्वादशांगी के ज्ञाता होकर विविध तपस्याओं को करते हुए कर्मों की सत्ता समूल नष्ट कर केवल ज्ञान पाकर अरिहंत हो गये। बाद में कई भव्यात्माओं को उपदेश देते हुए पृथ्वी मण्डल को पावन करते हुए अन्त में श्री सिद्धाचल तीर्थाधिराज पर एक मास की संलेखना कर सिद्धि गति को पाये।

इस प्रकार भगवान श्री महावीर स्वामी ने महाराजा चेटक से फरमाया कि हे परम श्रावक! अक्षयनिधि तप के—अधिकारी नर-नारी द्रव्य भाव अक्षयनिधि को प्राप्त करते हैं। महाराजा चेटक ने भगवान को वंदना की, और भगवान की जय नाद के साथ अक्षयनिधि तप की भावना को लेकर वापस विशाला में आये और भगवान श्री महावीर देव पृथ्वी मंडल को पावन करते हुए विचरने लगे।

इस कथा को सुनकर भव्यात्मा तपस्या में प्रवृत्त हों और आत्म लाभ प्राप्त करें।

॥ इति अक्षयनिधि-तपोविधि समाप्त ॥

असार ससार की बोधप्रद लावणी

देखत भूली ख्याल तमाशा बाजीगर का है खिलका।
ए ससार ! तू ऐसा बादल, ओस बूद बिजली चमका ॥
सद्गुरु सीख माने क्यों नहीं जनम मरन का दुःख मिटता।
दान शील तप भाव और, ससार समुद्र का फंद कटता ॥
सिमर पोसो करी सामायिक, सूत्र सिद्धान्त पर चित धरता।
व्याख्यान वाणी सुणोरे श्रद्धा से, पाप घटे ज्यू पुण्य बधता ॥
सुई सफाई बोले रे थोकड़ा, नव पदारथ मुख करता।
ज्ञान परली समकित पलली, पापी पिण्ड से गेये डरता ॥
इति घुध जो नहीं हुए, नवकार मन्त्र हृदय धरता।
भाव चढावे भवने छेदे, मन वाछित सव सिद्ध करता।
चौदह पूर्व निया सारी, भगवन्त भाया है हितकारी।
अनेक तिर्यंच तिरिया नरनारी, श्रद्धा शुद्ध पाप्यो हितकारी ॥
नवकार जपे ऊची गत पामे, शिवरमणी सुख है चमका।
ए ससार तू ऐसा बादल, ओस बूद बिजली चमका ॥
पृथिवी अप वा तेयु वायु, वनस्पति हे त्रसकाय।
छकाया ने मार रह्यो है, आरम कर कर हरखाय ॥
छेदन भेदन तरजन त्रास नो, गालो दे दे धमकाया।
फिरे फिरे ने दुःख तू देवे, वेर निया [illegible] बस आया ॥
झूठ चोरी मैथुन सेवे, पर नारी से दिल लाया।
स्वाद भोग सुख रसना पेखी॰ परभव चिन्ता नहीं लाया ॥

कोड़ाँ कोड़ी माया जोड़ी, लोभ लालच मू, बहु छाया ।
आश तृष्णा मेटी नाहीं, करत हुए माया माया ॥
कूड़ कपट छल छेदन करता, कोडी मटा तू जो लड़ता ।
जोड़ जोड़ धरम धन करता, पापी नरक कुंड पड़ता ॥
जनम मरन है बुरा जगत का जिम कपे जीवरा हम का ।
ए संसार तू ऐसा बादल ओस बून्द बिजली चमका ॥
क्रोध मान अहंकार भरयो है, राग द्वेश में रंग राता ।
जाल फासी दगा फाटका, अनेक हुनर चल आता ॥
तू दोसा देवे लोगा ने, साचे ने कूड़ा करता ।
घड़ा आन्मी वजर लोका से, मिथ्यात्व तुम को सोहाता ॥
पाप अठारे रुच रुच बांधे, मोह करम को मद माता ।
अनेक वस्तु सेवे कड़वि, पाप की पोट माथे धरता ॥
मात पिता है हेतु बन्धु, बेटा लुगाई धन खाता ।
पाप करम तू जान्यो जड़ो, नरक निगोद में पर जाता ॥
सब मतलब की प्रीत सगाई, बिना स्वार्थ तू करे लड़ाई ।
पयो वल्लभ के गाले गाई, पाप उदय फिर कोई नहीं सहाई ॥
मगर पलाश उगा हुआ, खूब गया आतम धमका ।
ए संसार तू ऐसा बादल ओस बून्द बिजली चमका ॥
मारो मारो मत कर मूरख थारा सब यह छण का है ।
कनक कामनी कुटम्ब कबीला जमीं घर देखन का है ॥
ज्यु बटाऊ वासु लेवे, पथी पथ विहाणा है ।
खर्ची है तो खा ले मूरख, आखिर पर भव जाना है ॥

धन जोबन ज्यु कुटुम्ब कबीला, मेला ज्यू मटाना है।
विछर गया सब जुदा जुदा रे मोह जाल मर जाना है॥
पड़दा सुपारी खान पान में, मूँडा म्हड हिलाणा है।
लावे मूवे गपिया मार, यूंही जनम गमाना है॥
सोच समझ कुछ लीनी नाहीं, ढोर चढे ज्यु खावे थाहीं।
मिथ्या दुक्कर खूब माहीं, मनुष्य जमानो फिर है नाहीं॥
जैन धर्म कुछ रुचियो नाहीं, लख चौरासी मे धमका।
ए ससार तू ऐसा, बादल ओस बुंद बिजली चमका॥
मनुष ऐव गति दुर्लभ पायो, तिर्यंच गति में जासो ला।
छकाया ने भ्रमता डोलो, जनम मरन वधासो ला॥
तेसो यांणिया घणा पछतासो, योंही तो पछतासो ला।
पश्य अजरो भूख तृपा तप सीस धूप दुख पासो ला॥
नरक निगोद म दुख घणा है, समझ जीव डिठा भाला।
मगर पछाणे मार परेली, छदन भेदन बहु झाला॥
आख मीच तिल मातर मोने, सुख नहीं इतना काला।
शस्त्र मूली अगन पछार, जे झाट मारे भाला॥
पकड़ २ चिम कपड़ा चोटा, चिकराला पुद्गल मारे सोटा।
ज्यु धरी पर लागे टोटा, टुकडा कर २ मारे सोटा।
गुरु एम रटी कहवे सीख, मानो काटोगे चिम फद का॥
ए संसार तू ऐसा, बादल ओस बून्द बिजली चमका।

जीव की सज्झाय

आयो एकलो एक ही जासी, क्यों कर एती उदासी रे जीव।
कुटुंब मिल्यो तेरो खगन समासी, प्रवध प्रभात उडासी रे जीव॥
आयो एकलो एक ही जासी ॥१॥
पुद्गल रे प्रपच लुभासी, मिल २ विछर जावे रे जीव।
गलन परन रो धर्म कहावे निश्चित कौन ठहरावे रे जीव॥
आयो एकलो एक ही जासी ॥२॥
अच्छा सयोग मिल्या सुख मानेड, हुवा वियोग दुख ठाने रे जीव।
सुख दुःख येहूँ भूठा रे जाणे जो नित सरूप पिछाने रे जीव॥
आयो एकलो एक ही जासी ॥३॥
भोग सयोग में लुभ्यो रे भाई, रोह वियोग की भाई रे जीव।
तीर्थ पति श्री मुख फरमावे, इन में शका न कोई रे जीव॥
आयो एकलो एक ही जासी ॥४॥
मोह सुभट धीरज गढ ढावे, ज्ञान बलिष्ट बनावे रे जीव।
आरत कोट रो संघ छुडावे, समता रस में लावे रे जीव॥
आयो एकलो एक ही जासी ॥५॥

धना जी की सज्झाय

धना मैं तो वारी रे, धना आज नहीं जोग का।
सतगुरु वचन विचार के धना, कीजे एक प्रश्न।
बादल बरखो प्रेमका धना, बीज गया सारा क्षग ॥ धना ॥

तुम से ए घर शोभता, धना तू छै सार रतन।
दीपक बिन मन्दिर कैसे, धना तुम बिन एघर सुन ॥धना॥

तिरिया बत्तीसे भावनी धना, सुन्दर रूप अपार।
तेरे विरह नहीं सहू सकें धना, मत मूको निरधार ॥धना॥

चन्द बिन कैसे चादनी धना, नग बिन मुन्द्री केम।
देव बिन कैसे देहरा धना, तुम बिन काम नहीं एम ॥धना॥

पान फूल बिन रूखरा धना, फल बिन बेल सुरूप।
दीपक बिन मन्दिर कैसे धना, गोरियों रूप सरूप ॥धना॥

ए घर धन कंचन भरिया धना, सुख भोगो संसार।
वृद्धा माता का मान ले धना, संयम की नहीं सार ॥धना॥

तरिया बत्तीसे भावनी धना, उन से प्रीत न छोड़।
कतियारी के सूत सू धना, किम टूटे किम जोड़ ॥धना॥

सेनफ दीन, दयावना धना, ओ भाई पछताय।
रवि उगे ससी आठमें धना, चन्द्र बदन कमलाय ॥धना॥

नव मासे उदरे धरया धना, मैं मन सह्या दुख घोर।
बहु दुखा सू पालियो धना, अब तू भयो रे कठोर ॥धना॥

तेरे विरह विजोग से धना, दुख किम आखो न जाय।
या जाऐ जीव मेरा धना, या जाओ जिनराज ॥धना॥

❀ धन्ना का उत्तर ❀

माता वचन सुणे करी, धना बोल्या इम परवेण।
सुम मत ट्यो दीक्षा तणी, माता जिम पामू सुख चैन ॥

माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री
सजम लेसु हरख सु माता मैं छोड्डू स
तन धन जोवन कार म माता, कारण शुभ परि
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री म
ए परिजन सहु कार में माता, कारण नारी नेह
भयन भोग महूँ कार में माता, कैसे करू स
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा
सां जो कह्या सजम डोहिला माता इनमें शका न कोय
कायर ने छे डोहिला माता, सुरम्धा ने सुख होय
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (
हूँ मत लोनी मोहनी माता, मैं छोड़ भइ थार।
एह सुख मैनो न गमे माता, पाऊ दुख नो न पार
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (५)
जैसे चचल बिजली माता, तैसे है ससार।
डाभ पर जल बिन्दु आयता छठतया न लागी वार।
माता मेरी में लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (६)
जन्म जरा मरण कथा माता और व्याध दुख रोग।
चउगति माही में रूलाया, बधव वैण वियोग॥
माता मेरी में लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (७)



चिदानन्दजी का उपदेशप्रद एक पद

विरथा जनम गमायो, मूरख !

रंचक सुखरस वश होय चेतन, अपनो मूल नसायो।
पांच मिथ्यात धार तू अजहूँ, साँच भेद नहिं पायो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख ॥

कनक-कामिनी अरु एहथी, नेह निरन्तर लायो।
ताहू थी तू फिरत सुरानो, कनक बीज मनु खायो॥
विरथा जन्म गमायो, मूरख ॥

जनम जरा मरणादिक दुःख में, काल अनन्त गमायो।
अरहट घटिका जिम, कहो याको, अन्त अजहुँ नवि आयो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख ॥

लख चौरासी पहेर्या चोलना, नव नव रूप बनायो।
बिन समकित सुधारस चाख्या, गिणती कोउ न गिणायो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख ॥

एते पर नवि मानत मूरख, ए अचरीज चित आयो।
'चिदानन्द' ते धन्य जगत में, जिण प्रभु सूँ मन लायो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख ॥



माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (१)
संजम लेसू हरख सू माता मैं छोड़ू ससार।
तन धन जोवन कार में माता, कारण शुभ परिवार॥
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (२)
ए परिजन सह कार में माता, कारण नारी नेह।
भजन भोग सहूँ कार में माता, कैसे करू सन्देह॥
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (३)
तैं जो कह्या संजम डोहिला माता इनमें शंका न कोय।
कायर ने छे डोहिला माता, सुरम्या ने सुख होय॥
माता मेरी म लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (४)
हूँ मत लीनी मोक्षनी माता, मैं छोड़ू सह वार।
पह सुख मैनो न गमे माता, पाऊ दुख नो न पार॥
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (५)
जैसे चचल बिजली माता, तैसे है ससार।
डाभ पर जल बिन्दु आयता छटतया न लागी वार॥
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (६)
जन्म जरा मरण कह्या माता और व्याध दुख रोग।
चउँगति माही मैं रुलाया, बधव बैण वियोग॥
माता मेरी मैं लेसू री, मेरा जोग सुहेला री मा (७)



चिदानन्दजी का उपदेशप्रद एक पद

विरथा जनम गमायो, मूरख !

रंचक सुखरस वश होय चेतन, अपनो मूल नसायो।
पंच मिथ्यात धार तू अजहूँ, साँच भेद नहिं पायो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख॥

कनक कामिनी अरु एहथी, नेह निरन्तर लायो।
ताहथी तू फिरत सुरानो, कनक बीज मनु खायो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख॥

जनम जरा मरणादिक दुख में, काल अनन्त गमायो।
अरहट घटिका जिम, कहो याको, अन्त अजहूँ नवि आयो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख॥

लख चौरासी पहेर्यो चोलना, नव नव रूप बनायो।
बिन समकित सुधारस चाख्या, गिणती कोउ न गिणायो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख॥

एती पर नवि मानत मूरख, ए अचरिज चित आयो।
'चिदानन्द' ते धन्य जगत् में, जिण प्रभु सूँ मन लायो॥
विरथा जनम गमायो, मूरख॥



अक्षय निधि घट भरने की विधि

१० खमासमण देने के बाद एक पसल (दो हाथ) में अक्षतका घोबा भरे अर्थात् अक्षत लेकर खड़ा रहे और यह स्तुति बोले।

बोधागाधं सुपदपदवी नीरपूराभिरामं,
जीवाहिंसा-विरललहरी-संगमागाहदेहं।
चूलावेलं गुरुगममणि-संकुलं दूरपारं,
सारं वीरागमजलनिधिं सादरं साधु सेवे।

यह स्तुति कह कर बाद में नीचे की गाथा कहे—

"ज्ञान समो कोई धन नहीं, समता समो नहि सुख।
जीवित सम आशा नहीं, लोभ समो नहीं दुःख।"

इस प्रकार बोल कर ३ प्रदक्षणा देकर अपने अपने कुंभ में एक एक पसल अक्षत डाले।



ऋषभदेव स्वामी से प्रार्थना।

वेकर जोटी वीनवुंजी। सुण स्वामी सुविदीन॥ कूड कपट मूकी करीना। वात कहुं आपवीत॥ १॥ कृपा नाथ मुझ वीनतीं अवधार॥ टेर॥ तू समरथ त्रिभुवन धणीजी। मुझने दुत्तर तार॥ कृ०॥ २॥ भवसायर भमता थका जी। दीठा दुःख अनन्त॥ भाग संयोगे भेटीयो जी। भयभञ्जण भगवन्त॥ कृ०॥ ३॥ जे दुःख भाजे आपणोजी। तेहने कहिये दुःख॥ परदुःख भञ्जण तूं सुण्यो जी। सेवकने गो सुक्ख॥ कृ०॥ ४॥ आलोयण लीधा पखेजी। जीव रुले संसार॥ रुपो लक्ष्मणा महासतीजी। एह सुणों अधिकार॥ कृ०॥ ५॥ दूषमकाले दोहिलोजी। सूधो गुरु संयोग॥ परमारथ पीछे नहींजी। गडरप्रवाही लोग॥ कृ०॥ ६॥ तिण मुझ आगल आपणाजी। पाप आलोऊं आज॥ माय बाप आगल बोलतांना। बालक केहो लाज॥ कृ०॥ ७॥ जिन धर्म जिन धर्म सहु कहेजी। थापे अपणी वात॥ समाचारी जुइ जुइजी। शंसय पड्या मिथ्यात॥ कृ०॥ ८॥ जाण अजाणपणे करीजी। बोल्या उत्सूत्र बोल॥ रतने काग उड़ावताजी। हार्यो जनम निटोल॥ कृ०॥ ९॥ भगवन्त भाख्यो ते किहांजी किहां मुझ करणी एह॥ गज पाखर खर किम सहेजी। सबल विमासण तेह॥ कृ०॥ १०॥ आप परूप्यो आकरोजी। जाणे लोक महन्त॥ पिण न करूं परमादीयोजी। मा साहस दृष्टान्त॥ कृ०॥ ११॥ काल अनन्त मैं लह्या जी। तीन रतन श्रीकार॥ पिण परमादे पाडियाजी। किहां जई करूं पुकार॥ कृ०॥ ॥ १२॥ जाणुं उत्कृष्टी करुं जो। उग्र करुं रे विहार॥ धीरज

जीव घर नहींजी । पोत पड़ संसार ॥ कृ० ॥ १३ ॥ सहज पल्यो गुरु आकरोजी । न गमें रूड़ा वाग ॥ परनिन्दा करता थकाँ । नावे दिनने राग ॥ कृ० ॥ १० ॥ किरिया करतां दोहिलीजी । आलस आणें जीव ॥ धरम पखे धंधे पड्योजी । नरके पड्सी रीव ॥ कृ० ॥ १५ ॥ अणहुँता गुण को कहे जी तो हरखुं निसदीस ॥ को हित शिक्षा भली कहेजी । तो मन आणुं रीस ॥ कृ० ॥ १६ ॥ वाद भण्यो विद्या भणीजी । पर रंजण उपदेश ॥ मन संवेग धर्यो नहींजी । किम संसार तरेश ॥ कृ० ॥ १७ ॥ सूत्र सिद्धान्त वखाणताजी । सुणता करम विपाक ॥ खिण एक मनमांहि ऊपनोजी । मुझ मरघट वैराग ॥ कृ० ॥ १८ ॥ त्रिविध त्रिविध करी ऊचरूंजी । भगवंत तुम हजूर ॥ वार-वार भांगुं वलीजी । छूटक वारो दूर ॥ कृ० ॥ १६ ॥ आप काज सुख राचतांजा । कीधा आरम्भ कोड़ ॥ जयणा न करी जीवनीजी । देव दयापर छोड़ ॥ कृ० ॥ २० ॥ वचन दोष व्यापक कह्या जी । दाख्या अनरथ दण्ड ॥ कूड़ कपट बहु केलवीजी । व्रत कीधा शतखंड ॥ कृ० ॥ २१ ॥ अणदीधो लीजे तृणोजी । तोही अदत्तादान ॥ ते दूषण लागा घणाजी । गिणतां नावे ज्ञान ॥ कृ० ॥ २२ ॥ चंचल जीव रहे नहीं जी । राच रमणी रूप ॥ काम विटंबण सी कहुंजी । ते तुं जाणो सरूप ॥ कृ० ॥ २३ ॥ माया ममता में पड्योजी । कीधो अधिको लोभ ॥ परिग्रह मेल्यो कारमोजी न चढ़ी संजम शोभ ॥ कृ० ॥ २४ ॥ लागा मुझने लालचेजी । रात्रीभोजन दोष ॥ मैं मन मूक्यो मोकलोजी । न धर्यो धरम संतोष ॥ कृ० ॥ २५ ॥ इण भव परभव दूहव्याजी । जीव चौरासी लाख ॥ ते मुझ मिच्छामि दुक्कड़ जी ।

॥ कृ० ॥ २६ ॥ करमादान पनरे कह्यानी । प्रकट अढार पाप ॥ जे मैं कीधा ते सहूनी । बगसो बगसो माई बाप ॥ कृ० ॥ २७ ॥ मुझ आधार छे एहवोजी । सरदहणा छे शुद्ध ॥ जिन धर्म मीठो जगतमें जी । जिम साकर में दुग्ध ॥ कृ० ॥ २८ ॥ ऋषभ देव तू राजियोजी । शत्रुञ्जय सिणगार ॥ पाप आलोया आपणानी । पर प्रभु मोरी सार ॥ कृ० ॥ २९ ॥ मर्म एह जिन धर्मनोजी । पाप आलोया जाय ॥ मनसुं मिच्छामि दुक्कड दीजे ॥ देता दूर पुलाय ॥ कृ० ॥ ३० ॥ तू गति तू मति तू धणीजी । तू साहिब तू देव ॥ आण धरु शिर ताहरीजी । भव भव ताहरी सेव ॥ कृ० ॥ ३१ ॥ कलश ॥ इम चडिय सेत्रुञ्ज चरण भेट्या नाभिनन्दन जिन तणा । करजोडि आदि जिणंद आगे पाप आलोया आपणा ॥ श्रीपूज्य जिनचंदसूरि सद्गुरु प्रथम शिष्य सुजश घणा । गणि सकलचन्द सुशिष्य वाचक "समयसुन्दर" गणि भणे ।

